Nav Jyoti, Vol. 5, No. 11, July-December 2017 ISSN : 2249-7331

पुलिस में भूमिका संघर्ष का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ0 पल्लवी कुमारी
एम0ए0 समाजशास्त्र, पी–एच0डी0

विश्व के अन्य देशों की तरह भारत में भी इसके भोगोलिक विविधता, बहु जातियता, बहु संस्कृति और बहु नृजातिय प्रकृति स्पष्टतया दिखाई पड़ती है। भारत विश्व के लगभग सभी धर्मों का निवास स्थान है। वर्तमान में जबकि धार्मिक उन्मादता अपने चरम सीमा पर पहुंच रही है वैसी स्थिति में पुलिस बल की जवाबदेही तो बढा दी जाती है परंतु उनकी जो आवश्यक्तायें हैं उसको पूरा करने के लिए कोई ध्यान नहीं दिया जाता। जिससे पुलिस वालों की कार्य प्रणाली पर नकारात्मक प्रभाव पडता है।

वर्तमान समय में जहां देश अलगाववाद आतंकवाद से जुझ रहा है वहीं दूसरी ओर राज्य नक्सलवाद की समस्या का सामना कर रहे हैं। जिससे पुलिस बल को ज्यादा से ज्यादा समय अपने मोर्चे पर डटे रहना पड रहा है। जिसने आंतरिक सुरक्षा पर सवाल उठा दिये हैं और अगर पुलिस इस समस्या का सामना करने में अपने आपको विफल पाती है तो इसके पीछे कहीं न कहीं उनके कार्य की विपरित परिस्थितियां व राजनीतिक हस्तक्षेप जिम्मेदार है। वर्तमान पुलिस बल की कार्य प्रणाली आई पी ए के अंतर्गत आती हैं इसके अलावे इंडियन पीनल कोड 1862 भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 ओर कोड ऑफ क्रिमिनल प्रोसिडयोर 1861 के अधिन।[1] वे मिलकर वर्तमान का निर्माण अवश्य करते हैं परंतु वे अनुपयोगी हैं। राज्य स्तर पर कुछ प्रयास अवश्य किये गये जिससे पुलिस प्रणाली में सुधार किया जा सके। परंतु किये जाने वाले सभी प्रया 1861 पर ही आधारित रहे और औपनिवेशिक मानसिकता को ही आगे बढाते रहे।

पुलिस वर्तमान में कार्यों के बोझ से दबी हुई है और पुराने अपराधों की जांच में ही उसका अधिकांश समय व्यतित हो जाता है। इस समस्या को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि इसके पीछे के विद्यमान कारकों को जाना जाये। पुलिस की सर्व प्रमुख समस्या उनकी संख्या की सीमितत और आर्थिक संसाधनों का अभाव है। पुलिस को उचित प्रशिक्षण नहीं दिये जाने के कारण वे जनता की समस्याओं को तार्किक तौर पर दूर कर पाने में अपने आपको असफल पाते है। जो उनकी समस्या का कारण बनता है। एक पुलिस ऑफिसर अपनी पुरी योग्यता व कुशलता का प्रयोग करते हुए 50–60 केसों का निपटारा कर सकता है।[2] यद्यपी मालिमथ समिति ने अपनी अनुशंसा में इसमें ओर दस केसों को जोडा था। इस अनुशंसा के आलोक में रांची शहर में देखा जाये तो एक एक पुलिस ऑफिसर के जिम्मेदारीयों में आने वाले केसों की संख्या को 80 प्रतिशत तक है। जहां तक केसों के अनुसंधान की बात है तो यहां पर मात्र 12 प्रतिशत पुलिस वालों को ही इसके अधिकार दिये गये हैं। दूसरी ओर पुलिस वालों के बीच किसी भी अपराध के अनुसंधान के लिए प्र्याप्त मात्रा में स्रोतों का अभाव है। जैसे जैसे समाज आधुनिकीकृत हो रहा है वैसे वैसे अपराध की प्रवृति में भी परिवर्तन आ रहा है। परंतु पुलिस को इन परिस्थितियों में या तो अपने से उच्च पदस्थ अफसरों पर निर्भर होना पडता है या दूसरे राज्यों की फारेंसिक जांच की रिपोर्ट पर । यहां पर अधिकांश केसों के अनुसंधानक सबूत के तौर पर मौखिक स्वीकारोक्ति को ही आधार बनाते है जो न्यायिक प्रक्रिया में टिक नहीं पाता।

पुलिस व आमजनता के बीच के संबंधों में होने वाली बेहतरी का अभाव में पुलिस की समस्यायें भी है। जिसके कारण जब कोई आमजनता रिपोर्ट कराने जाती है तो वे पूर्व से ही आपने कार्यो के बोझ से इतना दबे होते हैं कि वे उसे ढंग से नहीं मिलते या उनकी समस्याओं में रूची नहीं दिखाते और पुलिस व आमजन के बीच बेहतर संबंध नहीं बन पाता है। वहीं दूसरी ओर जनता पुलिस की समस्याओं से अनजान होती है इसलिए वह पुलिस को समाज की समस्याओं को सुलझाने वाला न समझकर उसे बोझ समझती है।[3] साथ ही पुलिस पर विविध अपराधों में अपराधीयों को छोडने के लिए राजनीतिक दबाव भी रहता है। इसलिए वे चाहते हुए भी समस्या का उचित निपटारा नहीं कर पाते है।

पुलिस की सर्व प्रमुख समस्या उनके कार्यों में राजनीतिक हस्तक्षेप है। जहां तक सिद्धांतों की बात है तो पुलिस को भारतीय संविधान के माध्यम से यह अधिकार दिया गया है कि वह अपने कार्यों को

निष्पक्ष रूप से पूरा करने के लिए स्वतंत्र है और उस पर न तो किसी तरह का दबाव रहेगा और न ही उनके कार्यो में किसी भी तरह की बाधा उत्पन्न की जायेगी। और वे पूर्ण रूप से अपने कार्यो के लिए राज्य सरकार के प्रति जवाबदेह होंगे। परंतु जब इसकी वास्तविकता को देखा जाये तो पाते हैं कि पुलिस बल को अपने कार्यों के प्रत्येक स्तर पर राजनीतिक दबाव में स्थानांतरण पदोन्नती और कार्यों में अनेक प्रकार के संदर्भों में समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार के दबाव के दो प्रमुख कारक हैं– पहला भ्रष्टाचार व दूसरा अपराधियों का राजनीतिक संपर्क।

जहां तक निर्भरता की बात है तो किसी भी राज्य में उसका मुख्यमंत्री विधायकों के समर्थन के आधार पर ही अपने पद पर बना रह सकता है। इस परिस्थिति ने विधायकों को एक स्रोत प्रदान किया है कि वे अपने समर्थन के आलोंक में मुख्यमंत्री को दबाव देकर पुलिस कर्मीयों के स्थानांतरण, पदोन्निति और नियुक्ति का निर्धारण करते हैं। वैसे पुलिस अधिकारी जो कानून का पालन अपने दायित्वों के निर्वहन में करते हैं परंतु राजनीतिक संपर्क के अभाव में होते हैं उनको वैसे पदों पर या वैसे जिलों में नियुक्त कर दिया जाता है जहां उनकी योग्यता का उपयोग संभव नहीं है वहीं दूसरी ओर राजनीतिक संपर्क वालें पुलिस पदाधिकारीयों को रिवार्ड के तौर पर विशिष्ट जिले प्रदान कर दिये जाते हैं।[4] इसके परिप्रेक्ष्य संबंधित विधायक उन अफसरों से भूगतान प्राप्त करते हैं और सरकार को समर्थन देकर मुख्यमंत्री पर अहसान भी जताते रहते हैं। इस परिस्थिति में भी पुलिस वाले अपने कार्यों के लिए राजनीतिक दबाव महसूस करते हैं। वहीं दूसरी ओर नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में इनको प्रत्येक प्रकार की सामाजिक आर्थिक व क्षेत्रिय समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जैसे स्वास्थ्य व चिकित्सा की बेहतर सुविधा का अभाव, भोजन का अभाव निवास स्थान की बेहतर व्यवस्था का अभाव व कार्य के घंटों की अनिश्चितता इसके डर से भी वे राजनीतिज्ञों के दबाव में कार्य करते रहते हें जिससे उनका स्थानांतरण ऐसी जगहों पर न किया जाये।

इस प्रकार की स्थिति पुलिस की कार्य प्रणाली को विशेषतया अपराध अनुसंधान के संदर्भ में नकरात्मक तरीके से प्रभावित करती है। पुलिस जांच कर्ता अधिकारी अगर किसी भी प्रकार के अनुसंधान में अपने आपकों सही दिशा में ले जाना चाहता है और किसी भी विधायक या अन्य राजनीतिक दलों के हस्तक्षेप का विरोध करते हैं तो वैसी परिस्थिति में अगले ही दिन उनको अनुसंधान से हटाकर यातायात के संचालन में संबद्ध कर दिया जाता है। मार्शल ने वर्तमान परिदृश्य में निर्देशत्मक पुलिस की आवश्यक्ता पर जोर देते हुए यह बताया है कि पूर्व के सभी किये गये अध्ययन शहरी क्षेत्र की नेतृत्व आवश्यक्ता के आधार पर विकसित किये गये हैं। परंतु इसमें कहीं भी ग्रामीण पृष्ठभूमि की अवधारणा पर जोर नहीं दिया गया है। इससे पुलिस की वास्तविक परिभाषा को स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। इसलिए पुलिस की जिस अवधारणा का विकास किया गया वह शहरी निर्देशों के अनुरूप ही हुए।

सभी कार्य वरिष्ठ पुलिस स्तर के अधिकारी ही करते हैं सभी अधिकारी अपने अपने तरीकों से इन परिस्थितियों के विरूद्ध अपना विरोध प्रकट करते हैं एक अधिकारी अपने दिये गये कार्यों को पूरा करने के लिए प्राप्त समयों से परेशान होता है तो दूसरी ओर कार्यो का बंटवारा करने वाला अधिकारी उनके कार्य आवंटन से। यह तनाव पुलिस वालों के लिए उनके कार्य के संदर्भ में और सामाजिक जीवन के संदर्भ में विभिन्न प्रकार की समस्यायें उत्पन्न करता है। तनाव से मानसिक बीमारी हो सकती है और अगर ये अपना तनाव घर में लेकर आते हैं तो इससे उनके परिवार की सोच उनके कार्यो के प्रति नकारात्मक होती जाती है। जबकि जनता से जुडने का कार्य निम्न या कनिष्ठ अधिकारियों के जिम्मे होता है जो जनता की आवश्यक्ताओं की पूर्ति से ज्यादा अपने उच्च अधिकारीयों को खुश करने पर विशेष जोर देते है। यह करना न सिर्फ उनकी आवश्यक्त है बल्कि मजबूरी भी। झारखण्ड में 88 प्रतिशत पदों पर नियुक्त अधिकारियों में कांस्टेबल और हेड कांस्टेबल स्तर के अधिकारी हैं जो किसी भी अनुसंधान के लिए अधिकृत नहीं किये गये हैं।[5] यहां तक पुलिस विभाग के उच्च पदों पर बैठे अधिकारी भी कभी कभी अपने से उच्च अधिकारीयों के आदेशों से बंधे होते हैं या राजनीतिक दबाव में कार्यों को कार्य रूप देते हैं। इस परिस्थिति ने कांस्टेबल स्तर के पुलिस बल की मानसिकता को हिनता से भर दिया है उनकी नैतिका का ह्रास हो रहा है और उनकी कार्य क्षमता जनता की आवश्यक्तओं की पूर्ति के लिए संपूर्ण नहीं मानी जा सकती।लेथवुड और उनके सहयोगियों ने एक नया फ्रेमवर्क विकसित किया है

जिसके अंतर्गत किसी भी पुलिस संगठन में वर्तमान में कार्य की स्थिति का आकलन किया जा सके। इसके अंतर्गत चार कोर के कार्यों को बांटा गया हैः निर्देशन का निर्धारण, लोगों का विकास, संगठन का पूनर्निमाण, और प्रबंधकिय कार्यक्रम। यह पद्वति विभिन्न प्रकार के पुलिस सुधार के कार्यों और विश्वासों को अलग अलग तरीकों से स्थापित करने की कोशिश करता है। जिससे वे जिस किसी भी संगठन से जुड़े हुए हैं वहां के विकास की रूपरेखा का निर्धारण उनके माध्यम से किया जा सके।

रांची के नगरीय समाज में लोगों की यह सोच होती है कि पुलिस न सिर्फ कानून का पालन करने वाली संस्थां है बल्कि वह सामाजिक सेवा, सामाजिक परिवर्तन और लोगों के अधिकार व कर्तव्यों की संरक्षक होती है। पुलिस की नौकरी हमेशा तनाव से भरी होती है। एक तरफ तो उनको कानून के दायरे में रहते हुए कार्य करना पडता है तो दूसरी ओर अपराधीयों को पकडने की जिम्मेवारी और अपने उच्च अधिकारियों के आदेशों का पालन करना उनके कार्य को काफी दुरूह बनाता हैं यही दुरूहता न सिर्फ उनके कार्य के संदर्भ में लागू होती है बल्कि इसका असर उनके परिवार पर भी पडता है।[6] जब पुलिस कर्मी कानून के नियमों को मानते हुए कोई कार्य करना चाहते हैं परंतू वे उसमें असफल रहते हैं तो वैसी परिस्थिति में वे तनाव ग्रस्त हो जाते है दूसरी और पारिवारिक परिस्थितियों का इन पर विशेष प्रभाव पडता है। क्योंकि अगर कार्य के घंटे नियमित न हों परिसिथितयों अनूकूल न हों और अपने परिवार को समय न दे पाते हों तो वैसी स्थिति में पारिवारिक माहौल तनाव पूर्ण हो जाता है।

विजयंत शर्मा ने अपने अध्ययन जयपूर की पुलिस की संभावना व परिस्थितियों में बताया है कि पुलिस उन पुरातन संस्थाओं को आवश्यक रूप से जागृत करने का प्रयास करना चाहिए जो समाज के आवश्यक लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद कर सकें।[7] पुलिस को आवश्यक रूप से लोगों को इस कार्य हेतू तैयार करना चाहिए जिससे वे अपने अधिकतम क्षमता का प्रयोग कर सकें।

यहां पर उनके उपर कई तरह की जिम्मेदारीयां होती है। उनसे यह आशा की जाती हैं कि सभी परिस्थितियों में विशेष तौर पर संतुलन स्थापित करने का प्रयास करेगे और दूसरी ओर समाज की रक्षा करना कानून का पालन करना तथा अपने से उच्च अधिकारीयों के आदेशों को मानना उनकी प्रमुख जिम्मेदारी है। जब कोई व्यक्ति अपने कैरियर की शुरूआत करता है तो यह मानकर चलता है कि वह दूसरों की मदद कर पाने में सक्षम होगा। परंतु असहयोग व जनता का दबाव जैसे कारक उसे तनावग्रस्त कर देते हैं। जिसका मुख्य कारण पुलिस के कार्यों की प्रकृति और पुलिस संगठन की प्रकृति है।

जब पुलिस कांस्टेबल का भर्ती किया जाता है तो उसे यह सीखाया जाता है कि अपने यहां के कानुनों का उसे पालन करना होगा परंतु साथ ही प्रशिक्षण की अवधी में वह यह जान पाता है कि उसे अपने मनोनुकूल या भावनाओं के साथ या आत्मनैतिकता के साथ कार्य नहीं करना है बल्कि उसे वह करना है जो उसके उच्च अधिकारियों से आदेश प्राप्त होता है। उच्च अधिकारियों द्वारा अगर गलत आदेश दिया जाता है तो भी उसका पालन करना ही उनकी जिम्मेदारी है। पुलिस कर्मी एक ओर तो अपने कार्य के घंटों और उच्च अधिकारियों के आदेशों से बंधा होता है वहीं दूसरी ओर वह अपने परिवार के साथ बेहतर संतुलन नहीं बना पाने के कारण अक्सर तनाव की स्थिति में रहता है। अपने बच्चों के बेहतर पालन पोषण की कमी परिवार की देख रेख न कर पाने के कारण पारिवारिक व मानसिक प्रताडना जैसी स्थितियां उसे उसके पथ से डिगा देती है। साजेंट ओर हेड कांस्टेबल जैसे उच्च पदों पर बैठे लोगों को अपने कार्यों के संदर्भ में विशेष तनावों का सामना करना पडता है। जबकि सामान्य पेट्रोलिंग और दिन प्रतिदिन के कार्यों में लगे रहने वाले पुलिस कर्मी अपने आपको बेहतर दशा में पाते है। और तनाव मुक्त रहते है। उसी तरह से पुलिस का राज्य स्तर का मुखिया जो होता है उसे अपने महकमे के प्रत्येक अधिकारी और कर्मचारी की जवाबदेही दी जाती है। और वैसी स्थिति में उनके द्वारा किये गये किसी भी कार्य के लिए उनको जवबदेह होना पडता है।

इसका सबसे नकारात्मक प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है। वे स्वास्थ्य की स्थितियों से कार्य करने वाले पुलिसकर्मी ज्यादातर बीमारीयों से ग्रसित होते हैं। जैसे हाइपर टेंशन, अस्थमा, हे फीवर, त्वचा की समस्या, अल्सर, गैस्टोनिकल ट्रैक्ट , माइग्रेन और हेडेक, मानसिक कमजोरी जैसी बीमारीयों से ग्रसित हो जाते हैं।[8] यह उनके उपर शारिरीक और मानसिक तौर पर पडने वाले दबाव को ही दर्शाता

है। जिसका परिणाम उनके सेवा समाप्ति के बाद के वर्षों में विशेष तौर पर दिखाई पडता है। यहां पर कार्य करने वाले कर्मी ज्यादा तर उन परिस्थितियों में बिल्कुल ही नर्वस हो जाते हैं जबकि उनके द्वारा अपने ही किसी सहयोगी के शव को देखना पडता है[9] या किसी व्यक्ति के हत्या के बाद उसके शव को एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर ले जाना पडता है, या अपने परिवार या बच्चें से दूर रहना पडता है, अनियमित छुटिटयों का मिलना या छुटिटयां मिलने से इंकार किया जाना और जीवन का हमेशा संकट मय परिस्थितियों में होना जैसे कारक उनके कार्यो की परिस्थितियों को विपरित करते जाते हैं। ओर अपने आंतरिक तथा बाहय तनाव की स्थिति में वे हत्या या आत्महत्या जैसे खतरनाक कदम उठाते हैं। परिवार से होने वाला अलगाव इस परिस्थिति के लिए विशेष तौर पर जिम्मेदार होता है।

जिसके कारण पुलिस वाले अपनी योग्यताओं का बेहतर इस्तेमाल कर समस्याओं को दूर करने में सफल नहीं हो पाये है। और वे नही यह विश्वास दिला पा रहे हैं कि जनता के सभी प्रकार से वे सुरक्षा करने में सक्षम हैं। परंतु इसका दूसरा पक्ष भी हैं चाहे मिडिया हो, राजनीतिक दल हो न्यायालय हो या अन्य कोई संस्था हो वे पुलिस विभाग की नाकामयाबी की खबर को बडी बेबाकी से उठाते हैं और उसे चहुंओर प्रचारित करते हैं[10] परंतु जहां इस विभाग को तारिफ की उम्मिद होती है वहां पर वे हाथ पर हाथ धर के बैठ जाते है। इससे पुलिसकर्मीयें को मानसिक तनाव होता है और उनका मनोबल जो इनके सहयोग से उंचा हो सकता था वह नीचा होता जाता है। और वे अपने कार्यों के प्रति अपने दायित्वों से बचना चाहते हैं। या करने की कोई महत्वाकांक्षा उनके अंदर बाकी नहीं रह जाती।

निष्कर्ष

मोटेतौर पर भारतीय पुलिस प्रशासन में दोषों के अंतर्गत प्रशिक्षण, आधुनिक हथियारों की कमी, बजट की कमी, राजनैतिक हस्तक्षेप, भ्रष्टाचार, निषक्रिय सूचना तंत्र, आपसी समन्वय का अभाव आदि है। पुलिस प्रशसन वास्तव में अपनी जीर्ण अवस्था में स्वतंत्रता पूर्व के अंग्रेजों के बनाय प्राचीन अधिनियमों एवं नियमों पर संचालित हो रहा हैं जो कि वर्तमान समय एवं परिस्थितियों के अनूकूल नहीं है। अतः इसमें सुधारों की आवश्यक्ता है। राजनीतिक अवसरवादिता और आधिकारिक लालफीताशाही के बची में फंसकर पुलिस बल में सुधारों की प्रक्रिया को कभी भी प्र्याप्त महत्व प्रदान नहीं किया गया है। हालांकि कुछ खास समिति जैसे धर्मवीर कमेटी, मलीमथ कमेटी, सोराबजी कमेटी ने कुछ महत्वपूर्ण सुधारों की अनुशंसा की मगर इनकी अनुशंसा फाइलों में धुल चाट रही हैं यहां तक कि सवोच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निर्देशों में निर्दिष्ट संदर्भों में भी राज्य सरकारों को नई पुलिस नीति बनाने के लिए प्रेरित नहीं किया जो पुलिस बल को उपनिवेशवादी विरास से बाहर निकालकर आधुनिक रूा में स्थापित कर सके। हाल के दिनों में हुए आंतंकवादी हमलों और उनके कारण हुई बर्बादी के चलते राष्ट्र के धैर्य का बंध टूट रहा है। वर्तमान में पुलिस बलों का वेतन काफी कम हैं जिसके परिणामस्वरू इसमें विविध स्तरों पर भ्रष्टाचार व्याप्त है। जैसे पुलिसकर्मियों को उचित खानपान तथा रहन सहन के अलाव पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधायें उपलब्ध कराई जानी चाहिए। समय समय पर पुलिसकर्मियों का स्वास्थ्य परीक्षण किया जाना चाहिए। ताकी उन्हें उचित चिकित्सकीय परामर्श देने की सुविधा भी कराई जानी आवश्यक है। छदम आपरेशनों तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से पुलिस बलों को आपातकालीन स्थितियों मे मानसिक सुझ बूझ का परिचय देने त्वरित निर्णय लेने तथा उचित कार्यवाही करने का प्राशिक्षण दिया जा सकता है। जिस प्रकार भारत विभिन्न देशों के साथ संयुक्त सेन्य अभ्यासों का आयोजन करता है। उसी प्रकार पुलिस बलों को भी विभिन्न आंतरिक सुरक्षा एजेंसियों के साा संयूक्त अभ्यास कार्यक्रमों का आयोजन करना चाहिए।इससे विभिन्न सुरक्षा एजेंसियों में आपसी समन्वय ताा सौहार्द स्थापित होगा। और पुलिस बलों को पुलिस कानूनों, संवैधानिक कानूनों, अलग अलग क्षेत्रों में अपने अधिकारों, शक्तियों तथा कर्तव्यों के प्रति जागरूक किया जा सकता है।

संदर्भ सूची–

1. अंसेल एम एच, 2000, ए कंसेप्चूअल मॉडल एण्ड इमपिलिकेशन फोर कॉपियींग विथ स्ट्रेसफूल इवेंटस इन पुलिस वर्क, क्रिमिनल जस्टिस एण्ड विहेवियर पब्लिकेशन लंदन, पृसंख्या 315–318

2. बेकर, टी इ एण्ड बेकर जे पी, 1996, प्रिवेंटिंग पुलिस सुसाइड, एफ बी आई लॉ इन्फोरसमेंट बुलेटिन, न्यूयॉर्क, पृसंख्या 45
3. मेंजर, के, 1997, थिंकिंग इन कम्पलेक्सीटीः द कम्पलेक्स डायनामिक्स ऑफ मैटर माइंड एण्ड मैनकाइंड, स्प्रींगर पब्लिकेशन न्यूयॉर्क, पृसंख्या 406–07
4. शेरमन, एल, 2002, एविडेंस बेस्ड क्राइम प्रिवेंशन, राउलटेज पब्लिकेशन, न्यूयॉर्क, पृसंख्या 458
5. गर्वनमेंट ऑफ इंडिया 2008, मिनिस्ट्री ऑफ होम अफेयर्स, एनुअल रिपोर्ट 2006–07, डिपार्टमेंट ऑफ इंटरनल सिक्युरिटी, स्टेटस, होम, जम्मू एण्ड कश्मीर अफेयर्स एण्ड बॉर्डर मैनेजमेंट, पृसंख्या 47
6. गूरूस्वामी मोहन, 2006, इंडिया इश्यूज इन डेवलपमेंट, होप इंडिया पब्लिकेशन, गुडगांव, पृसंख्य 15–16
7. गोयल आशिश, 2007, रेजिंग वायस फोर द अदर हाफ ऑफ आवर पॉपुलेशन, मेन न्यूज पब्लिकेशन नवंबर 19 पृ संख्या 1–2
8. कुलकर्णी रमाकांत, 2004, फूटप्वाइंटस ऑन द सैंडस ऑफ क्राइम, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, पृसख्या 12
9. कुमार अरूण, 2007, एक्सपर्ट मॉब्स पनीशिंग क्रिमिनल एडमिनिस्ट्रेशन, हिंदुस्तान टाइम्स चंडिगढ, फ्राइडे सितंबर 14 पृ संख्या 13
10. मिश्रा, ओ पी, 2006, पोलिसिंग इन 21स्ट सेंचुरीः एरियाज फोर कन्सर्न द इंडियन पुलिस जर्नल, वॉल्यूम एल थ्री नं 1 जनवरी मार्च पृसंख्या 19

Nav Jyoti, Vol. 5, No. 11, July-December 2017 ISSN : 2249-7331

राष्ट्रीय एकता के विकास के लिए शिक्षा

डॉ0 नित्या श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर
रामेश्वरम् इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन एण्ड ट्रेनिंग, लखनऊ

सारांश

भारत अनेक धर्मों, जातियों और भाषाओं का देश है। धर्म, जाति एवं भाषाओं की दृष्टि से विविधता होते हुए भी भारत में प्राचीन काल से ही एकता की भावना विद्यमान रही है। जब कभी भी किसी ने उस एकता को खण्डित करने का प्रयास किया है, भारत का एक–एक नागरिक सजग हो उठा है। राष्ट्रीय एकता को खण्डित करने वाली शक्तियों के विरूद्ध आंदोलन आरम्भ हो जाता है। राष्ट्रीय एकता हमारे राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक है। और राष्ट्रीय गौरव की अनुभूति हमें तभी हो सकती है जब हम राष्ट्रीय एकता का अर्थ समझेगें और राष्ट्रीय एकता का अर्थ समझने के लिए हमें शिक्षित होना पडेंगा ताकि हमारे मस्ष्तिक में किसी भी प्रकार की ऊँच–नीच की भावना, छुआछूत जात–पात आदि बुराइयाँ हमारे मस्ष्तिक में जन्म न ले सकें। राष्ट्रीय एकता की भावना तथा शिक्षा में अत्यंत ही प्रगाढ संबंध है। शिक्षा के बिना न तो हम राष्ट्रीय एकता का अर्थ समझ सकते है और न ही महत्व। अतः राष्ट्रीय एकता को कायम रखने के लिए शिक्षा की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय एकता का अभिप्राय है– ''सम्पूर्ण भारत की आर्थिक सामाजिक, राजनीतिक और वैचारिक एकता।''

हमारे कर्मकाण्ड, पूजा–पाठ, खान–पान, रहन–सहन और वेशभूषा में अंतर हो सकता है। हमारे विचारों में और भौगोलिक वातावरण में भिन्नता हो सकती है किंतु सभी राज्यों, नगरों और कस्बों के लोगों को हम प्रदर्शित करते है तो केवल एक शब्द से जो कि ''भारतवासी'' है। इस प्रकार अनेकता में एकता ही भारत की प्रमुख विशेषता है। मोहन भागवत का मत है ''विश्व कल्याण की इच्छा करने वाले ऋषियों के उम्र तप के कारण भारत राष्ट्र की, बल की, ओज की उत्पति हुई।''[1] एकता एक भावात्मक शब्द है, जिसका अर्थ है– 'एक होने का भाव'। किंतु यह हम तब तक नहीं समझ सकते जब तक हम शिक्षा से वंचित रहेगें। शिक्षा ही एक मात्र उपाय है जो हमें एक सूत्र में बंधे रहने के लिए प्रेरित करती है। ''देश में आज राष्ट्रीय एकता की महती आवश्यकता है। लोगों में भावात्मक एकता का विकास प्रथम राष्ट्रीय वरीयता होनी चाहिए और इसके लिए जो प्रयास हो सके करना चाहिए।''[2]

भारत जैसे विशाल देश में अनेकता का होना स्वाभाविक है। धर्म के क्षेत्र में हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध, पारसी आदि विविध धर्मावलम्बी यहाँ निवास करते है। सांस्कृतिक दृष्टि से खान–पान, वेशभूषा, पूजा–पाठ आदि की भिन्नता भी अनेकता की घोतक है। साहित्यिक दृष्टि से भारत की प्राचीन और नवीन भाषाओं में रचित साहित्य की भिन्न–भिन्न शैलियाँ विविधता की सूचक है। भारत की प्राकृतिक शोभा, भौगोलिक स्थिति, ऋतु–परिवर्तन आदि में भी पर्याप्त भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। इतनी विविधताओं के होते हुए भी भारत अत्यंत प्राचीनकाल से एकता के सूत्र में बंधा रहा है क्योंकि प्राचीनकाल के विद्वानों ने अपने ज्ञान के द्वारा लोगों में एकता की भावना जाग्रत की।

राष्ट्रीय की आंतरिक शक्ति तथा सुव्यवस्था और बाह्य सुरक्षा की दृष्टि से राष्ट्रीय एकता की परम आवश्यकता होती है। भारतवासियों में यदि जरा सी भी फूट पड़ेगी तो अन्य देश हमारी स्वतंत्रता को हड़पने के लिए तैयार बैठे है। 'अखिल भारतीय राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने कहा था– ''जब–जब भी हम असंठित हुए, हमें आर्थिक और राजनीतिक रूप से इसकी कीमत चुकानी पड़ी है।'' अतः देश की स्वतंत्रता की रक्षा तथा राष्ट्र की उन्नति के लिए राष्ट्रीय एकता का होना परम आवश्यक है।

राष्ट्रीय एकता के लिए एक दूसरे के प्रति भाई–चारे की भावना आवश्यक है। आजादी के समय हमने सोचा था कि पारस्परिक भेदभाव समाप्त हो जाएगा। किंतु साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता, जातीयता,

अज्ञानता जैसी अनेक ऐसी मानसिकताओं ने देश को संक्रमित कर दिया है। राष्ट्रीय एकता के मार्ग में आने वाली बाधाएँ निम्न है।

- साम्प्रदायिकता :– राष्ट्रीय एकता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा साम्प्रदायिकता की भावना है। साम्प्रदायिकता एक ऐसी बुराई है जो मानव–मानव में फूट डालती है, समाज को विभाजित करती है। अग्रेजों ने ''फूट डालो और राज करों'' की नीति के अंतर्गत ही भारत–विभाजन कराया और पाकिस्तान तथा हिन्दुस्तान के बीच सदैव के लिए वैमनस्य का बीज बो दिया।
- प्रान्तीयता अथवा प्रादेशिकता की भावनाः– प्रान्तीयता अथवा प्रादेशिकता की भावना भी राष्ट्रीय एकता में बाधक है। क्षेत्र–विशेष के विकास के लिए हमें स्वयं प्रयास करना चाहिए तथा शांतिपूर्वक सरकार से क्षेत्र के विकास के लिए दृढ़ता से आग्रह करना चाहिए। 'कश्मीर से कन्याकुमारी' तक भारत एक है यह आदर्श ही हमारी राष्ट्रीय एकता का आधार है।
- जातिवाद :– भारत में जातिवाद सदैव प्रभावी रहा है। प्रत्येक जाति स्वयं को दूसरी जाति से सर्वश्रेष्ठ समझती है। जातिवाद राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बाधक है।
- अशिक्षा अर्थात शिक्षा का अभाव :– राष्ट्रीय एकता के मार्ग में एक और बड़ी बाधा है जनता का अशिक्षित होना। क्योंकि शिक्षा के अभाव में व्यक्ति नहीं समझ पाता कि कोई भी धर्म छोटा या बड़ा नहीं होता। धर्म बड़ा होता है तो केवल मानवता का धर्म। इस प्रकार शिक्षा का अभाव राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है।

राष्टीय एकता की हमारे देश में बड़ी अनोखी दशा है। कहीं तो हम बड़े शान से कह देते है कि हम भारतीय है परंतु वास्तविकता में तो हम भली–भांति जानते है कि बुरी मानसिकताओं ने हमारे एक होने के रास्ते को बन्द कर दिया है। हमें राष्ट्रीय हित के लिए अनेक विभिन्न जातीय, आर्थिक धार्मिक तथा सांस्कृतिक वर्गो के दृष्टिकोण बदलने होगें। राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाये रखने के लिए उपयुक्त शिक्षा प्रणाली को निर्धारित करना आवश्यक है क्योंकि यदि हमारी मानसिकता को सुधारना है तो हमें शिक्षित होना पड़ेगा शिक्षित होने पर ही हम राष्ट्रीय एकता को कायम रखने में सफल हो सकते है। अतः शिक्षा और राष्ट्रीय एकता का अत्यंत ही गहरा संबंध है। आज राष्ट्रीय एकीकरण को आवश्यक माना जाता है। यह राष्ट्रीय जीवन और राष्ट्रीयता के विकास हेतु आवश्यक है। इस भावना विकास के लिए शिक्षा ही सर्वोत्तम साधन है।[3]

शिक्षा के द्वारा बालकों में उचित रूचियों, सांस्कृतिक दृष्टिकोणों का विकास करके राष्ट्रीय एकता की अनिवार्यता दिखाकर बालकों में राष्ट्रीय प्रेम तथा एकता की भावना को उजागर कर सकते है। जिस प्रकार सूरज की रोशनी अंधकार को मिटा देती है। उसी शिक्षा लोगों के मन और मस्ष्तिक से वैमनस्यता को शिक्षा हर प्रकार से मिटा सकती है इस प्रकार राष्ट्रीय एकता को बनायें रखने में शिक्षा द्वारा एकता की भावना को लोगों में जाग्रत कर सकते हैं। शिक्षा विभिन्न प्रयासों द्वारा राष्ट्रीयता की भावना को विद्यार्थियों में भरने का कार्य कर सकती है।

- सभी शिक्षण केन्द्रों में बालकों को देश से जुड़ी हर जानकारी उपलब्ध करायी जाये जिससे वे देश के बारे में जान सकें।
- राष्ट्रीय एकता के विकास के लिए छात्रों को विद्यालयों को बताया जाये कि हम केवल सम्प्रदायों, जातियों और राज्यों के नाम पर अलग है किंतु मानवता में हम सब एक है।
- भाई–चारे की भावना को प्रोत्साहन दिया जाये।
- विद्यालयों और महाविद्यालयों में ऐसी पुस्तकें पढ़ायी जाये जिनसे राष्ट्रीय एकता के विकास में सहायता मिले।
- साम्प्रदायिक एकता से संबंधित अध्ययन–गोष्ठियो और नाटकों का आयोजन किया जाये। और इन गोष्ठियों में भाग लेने के लिए अन्य क्षेत्रों के विद्यालयों के छात्रों को भी आंमत्रित किया जाये।
- देश के विभिन्न भागों में 'युवक उत्सवों' का आयोजन किया जाये जिससे युवक एक दूसरे से मिले और एकता की भावना का विकास हो सके।
- छात्रों को विभिन्न क्षेत्रों की भाषाओं, साहित्य और सांस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन कराया जाये।

- विद्यार्थियों में भावनात्मक एवं राष्ट्रीय एकीकरण के अर्थ एवं महत्व की समझ विकसित की जाये।[4]
- विद्यार्थियों को उस स्वतंत्रता संग्राम के बारे में ज्ञान कराया जाये जिसमें विभिन्न धर्मो एवं क्षेत्रों के लोगों का सम्मिलित योगदान है।[5]

आज विकास के साधन बढ़ रहे है, भौगोलिक दूरिया कम हो रही है किंतु आदमी और आदमी के बीच की दूरियाँ बढ़ती जा रही है। हम सभी को मिलकर राष्ट्रीय एकता के लिए प्रयास करना चाहिए। शिक्षा से हमारा मन उदार तथा दृष्टिकोण व्यापक बनता है। भारत की आधी से ज्यादा जनता भावावेश में बह जाती है। बच्चों के मन में प्रारम्भ से ही सभी धर्मो, भाषाओं और जातियों के प्रति सम्मान हो इस पर ध्यान देना चाहिए। ऐसा किया जाना अत्यंत आवश्यक है।

सन्दर्भ :–

1. भागवत, मोहन : समाधान का वैश्विक मार्ग– अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् मुम्बई प्रथम संस्सकरण मई– 2015, पृष्ठ– 09–10.
2. श्रीवास्तव, कान्तिमोहन एवं श्रीवास्तव विवेक कुमार : शांति शिक्षा एवं सतत् विकास : साहित्य प्रकाशन, आगरा 2016. पृष्ठ–157
3. श्रीवास्तव, कान्तिमोहन एवं सिंह अहमद : ज्ञान एवं पाठ्यक्रम : साहित्य प्रकाशन, आगरा–2017. पृष्ठ– 401
4. वही– पृष्ठ– 401
5. वही– पृष्ठ– 402